Sat Pal Singh v. H arjit Singh
(Sat Pal, J.)

सत पाल, जे. के सामने

सत पाल सिंह,- पेटिटोनर

बनाम

हरजीत सिंह,- प्रतिवादी

1996 का सी. आर. सं. 2277

30मार्च, 1998

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश 37, नियम। 3 (5) और 4 और धारा 151-संक्षिप्त वाद-बचाव की अनुमति-गैर-अभियोजन के लिए वाद का बचाव करने की अनुमति मांगने वाले आवेदन को खारिज करना-विचारण न्यायालय से यह पता लगाने के लिए आवेदन की जांच करने की आवश्यकता है कि क्या पक्ष या वकील की उपस्थिति आवश्यक नहीं है वाद का बचाव करने के लिए न्यायालय की अनुमति के लिए प्रतिवादी के आवेदन पर विचार करने के चरण में-डिफ़ॉल्ट में बर्खास्तगी का आदेश अलग कर दिया गया।

अभिनिर्धारित किया कि, वर्तमान मामले में, प्रतिवादी ने आदेश 37 सीपीसी के तहत नियम 3 के उप नियम (5) के तहत एक आवेदन दायर किया था। चूंकि आवेदन अभिलेख पर था, इसलिए विद्वत विचारण न्यायालय से यह पता लगाने के लिए इस आवेदन की जांच करने की अपेक्षा की गई थी कि क्या आवेदन में बताए गए तथ्यों से संकेत मिलता है कि उसके पास उठाने के लिए पर्याप्त बचाव है या प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत बचाव तुच्छ या परेशान करने वाला था। इस प्रयोजन के लिए याचिकाकर्ता या उसके वकील की उपस्थिति आवश्यक नहीं थी और इस प्रकार प्रतिवादी द्वारा वाद का बचाव करने के लिए न्यायालय की अनुमति की मांग करने वाले आवेदन को विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 28 सितंबर, 1992 का आक्षेपित निर्णय पारित करते समय नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। तथापि, 28 सितंबर, 1992 के निर्णय से मैंने पाया कि विद्वत विचारण न्यायालय ने वाद का बचाव करने के लिए न्यायालय की अनुमति मांगने वाले आवेदन में प्रतिवादी द्वारा प्रकट किए गए किसी भी तथ्य का उल्लेख नहीं किया है। इसे ध्यान में रखते हुए, 28 सितंबर, 1992 के एकतरफा निर्णय और डिक्री को दरकिनार करने से इनकार करने वाले विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को कानूनी रूप से कायम नहीं किया जा सकता है।

(पैरा 7)

याचिकाकर्ता की ओर से *अधिवक्ता रविकांत शर्मा*

प्रतिवादी की ओर *से अधिवक्ता कंवलजीत सिंह*

निर्णय

(1) इस मामले में प्रतिवादी-वादी ने याचिकाकर्ता (प्रतिवादी) के खिलाफ सीपीसी के आदेश 37 के तहत मुकदमा दायर किया। याचिकाकर्ता-प्रतिवादी को 8.8.19 को समन जारी किए गए थे और उसके बाद याचिकाकर्ता 15.8.1990 को विद्वत निचली अदालत के समक्ष पेश हुआ। निर्णय के लिए समन 11.9.1990 को प्रतिवादी-याचिकाकर्ता को दिए गए थे और 29.9.1990 को याचिकाकर्ता ने आदेश 37 नियम 3 (5) के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें मुकदमे का बचाव करने के लिए अदालत की अनुमति मांगी गई थी। इस आवेदन का जवाब वादी-प्रतिवादी द्वारा 29.10.1990 को दायर किया गया था। तत्पश्चात, मामला 3.8.1992 को नियत किया गया था और उस तारीख को याचिकाकर्ता द्वारा वाद का बचाव करने की अनुमति मांगने वाले आवेदन पर बहस के लिए मामला 7.9.1992 तक स्थगित कर दिया गया था। 7.9.1992 को चूंकि याचिकाकर्ता-प्रतिवादी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ था, इसलिए याचिकाकर्ता द्वारा आदेश 37 नियम 3 (5) सीपीसी के तहत दायर याचिका में वाद का बचाव करने की अनुमति मांगी गई थी, जिसे डिफ़ॉल्ट रूप से खारिज कर दिया गया था और मामले को दस्तावेजों और विचार के लिए 26.9.1992 तक स्थगित कर दिया गया था। 26.9.1992 को प्रतिवादी-वादी द्वारा दस्तावेज दाखिल किए गए और दलीलें सुनी गईं और मामले को आदेशों के लिए 28.9.1992 तक स्थगित कर दिया गया। 28.9.1992 को प्रतिवादी-वादी के पक्ष में और याचिकाकर्ता-प्रतिवादी के विरुद्ध वाद का विनिश्चय किया गया।

(2) दिनांक 10.10.1992 को याचिकाकर्ता-प्रतिवादी ने आदेश 37 नियम 4 के साथ पठित धारा 151 सीपीसी और आदेश 9 नियम 13 सीपीसी के अधीन विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री दिनांक 28.9.1992 को अपास्त करने के लिए आवेदन दायर किया। इस आवेदन में, अन्य बातों के साथ, यह कहा गया था कि याचिकाकर्ता-प्रतिवादी के विद्वान वकील ने 3.8.1992 को सुनवाई की अगली तारीख 10.10.1992 के रूप में नोट की थी, जबकि अदालत के रिकॉर्ड के अनुसार मामले को उस तारीख को 7.9.1992 तक स्थगित कर दिया गया था। इसलिए यह तर्क दिया गया कि 7.9.1992 को याचिकाकर्ता के विद्वत वकील की अनुपस्थिति न तो जानबूझकर थी और न ही जानबूझकर। इस आवेदन की सूचना

प्रत्यर्थी-वादी को जारी की गई थी जिसने इस आवेदन का जवाब दाखिल किया था। तत्पश्चात विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा मुद्दे तैयार किए गए और-दिनांक 6.9.1995 के आदेश द्वारा, याचिकाकर्ता-प्रतिवादी द्वारा निर्णय और डिक्री दिनांक 28.9.1992 को अपास्त करने के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया। दिनांक 6.9.1995 के उक्त आदेश के विरुद्ध, वर्तमान याचिका याचिकाकर्ता प्रतिवादी द्वारा दायर की गई है। इस याचिकाकर्ता का नोटिस प्रतिवादी को जारी किया गया था।

(3) याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री रविकांत ने प्रस्तुत किया कि एक बार प्रतिवादी द्वारा वाद का बचाव करने के लिए अदालत की अनुमति की मांग करते हुए आदेश 37 नियम 3 के तहत एक आवेदन दायर किया गया है, तो उक्त आवेदन को व्यतक्रम के लिए खारिज नहीं किया जा सकता है, भले ही प्रतिवादी या उसका वकील अदालत में मौजूद न हो जब मामला इस आवेदन पर बहस के लिए तय किया गया हो।उन्होंने प्रस्तुत किया कि विद्वत विचारण निचली अदालत को केवल इस आवेदन में किए गए कथनों की जांच करनी है ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या आवेदन में बताए गए तथ्य प्रतिमुकदमाी को मुकदमे का बचाव करने का अधिकार देने के लिए पर्याप्त हैं।इसलिए, उन्होंने तर्क दिया कि प्रतिवादी या उनके वकील की अनुपस्थिति में में भी, विद्वत निचली निचली अदालत को आवेदन में बताए गए तथ्यों की जांच करने के बाद अपना दिमाग लगाना चाहिए था और गैर-अभियोजन के लिए आवेदन को खारिज नहीं किया जा सकता था।इस *निवेदन के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने* मैसर्स *सुशीला प्रोडक्शन इंजीनियर चंडीगढ़ और* अन्य बनाम भारतीय स्टेट बैंक, चंडीगढ़ (1) में इस अदालत के फैसले पर भरोसा किया।

(4) विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि 3.8.1992 पर, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने अपनी डायरी में सुनवाई की तारीख 10.10.1992 के रूप में नोट की, हालांकि अदालत के रिकॉर्ड के अनुसार मामले को 7.9.1992 तक स्थगित कर दिया गया था।अतः उन्होंने कहा कि 7.9.1992 पर अभाव जानबूझकर न था बल्कि वकील की डायरी में तारीख को गलत तरीके से नोट करने के कारण था।उन्होंने प्रस्तुत किया कि वकील की डायरी में तारीख का गलत उल्लेख करना पर्याप्त कारण था और इस तरह याचिकाकर्ता-प्रतिवादी द्वारा आदेश 9 नियम 13 सी. पी. सी. और आदेश 37 नियम 4 को खंड 151 सी. पी. सी. के साथ पढ़ने के लिए विद्वत निचली अदालत द्वारा अनुमति दी जानी चाहिए थी।अपनी दलीलों के समर्थन में, विद्वान वकील ने मेसर्स एनके प्राइवेट लिमिटेड बनाम होट्ज़ होटल्स (पी) लिमिटेड में दिल्ली उच्च न्यायाg लय की एक खंडपीठ के फैसले और सत पाल मैनी बनाम राम आशरा में इस अदालत के फैसले पर भरोसा किया ।

(5) प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री कंवलजीत सिंह ने हालांकि प्रस्तुत किया कि हालांकि एकतरफा निर्णय और डिक्री को दरकिनार करने

के लिए दायर आवेदन में यह कहा गया था कि 3.8.1992 पर, याचिकाकर्ता प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने सुनवाई की अगली तारीख को 7.9.1992 के बजाय 10.10.1992 के रूप में गलत तरीके से नोट किया है, लेकिन निचली अदालत के समक्ष पेश किए गए वकील की डायरी से, निचली अदालत ने पाया कि विचाराधीन मामला दिनांकित 26.9.1992 डायरी के पृष्ठ में भी दर्ज किया गया था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, विवादित आदेश में निचली अदालत द्वारा यह देखा गया था कि यदि आवेदक के वकील ने तारीख 10.10.1992 के रूप में दर्ज की थी तो मामला भी 26.9.1992 पर कैसे दर्ज किया गया था।इन परिस्थितियों में ही विद्वत विचारण निचली अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि विद्वान अधिवक्ता की डायरी पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता है।याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अन्य तर्क के संबंध में कि मुकदमे का बचाव करने के लिए अनुमति मांगने वाले आवेदन को डिफ़ॉल्ट रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आदेश 37 सी. पी. सी. के तहत ऐसी कोई आवश्यकता नहीं थी। इसलिए उन्होंने तर्क दिया कि इस याचिका में कोई दम नहीं है।

(6) मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए कथनों पर विचारपूर्वक विचार किया है और अभिलेखों का अवलोकन किया है।प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा रखा गया मामला यह है कि 3.8.1992 पर, उन्होंने अनजाने में सुनवाई की तारीख को 7.9.1992 के बजाय 10.10.1992 के रूप में नोट कर लिया था। विद्वान वकील स्वयं गवाह के रूप में पेश हुए और अदालत में डायरी पेश की। विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा डायरी से यह पाया गया कि विचाराधीन मामला दिनांक 26.9.1992 की डायरी के पृष्ठ में भी दर्ज किया गया था।हालाँकि, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता यह नहीं बता सके कि मामला डायरी के पृष्ठ पर 26.9.1992 पर कैसे दर्ज किया गया था, जबकि उनके अपने मामले के अनुसार उन्होंने अगली तारीख 10.10.1992 के रूप में दर्ज की थी।इन परिस्थितियों में ही विद्वत विचारण निचली अदालत ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसी डायरी पर कोई निर्भरता नहीं रखी जा सकती है| इस मामले के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ता के विद्वत वकील ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 26.9.1992 की डायरी में दर्ज किया गया मामला एक आपराधिक मामला था, लेकिन उस आपराधिक मामले के पक्षों का नाम वर्तमान मामले के समान था। इस निवेदन पर विद्वत वकील को इस कथन के समर्थन में एक शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया था-दिनांक 28.7.1997 के आदेश द्वारा। इस आदेश के अनुसरण में, विद्वत वकील का दिनांक 27.11.1997 का शपथपत्र दाखिल किया गया था, लेकिन शपथपत्र में यह कहा गया था कि स्किड आपराधिक मामला उस तारीख को तय नहीं किया गया था। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, मेरी राय है कि विद्वत विचारण निचली अदालत का यह अभिनिर्णय सही था कि याचिकाकर्ता प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता की डायरी पर कोई निर्भरता नहीं

रखी जा सकती है।मेसर्स एन. के. प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त) *और सत पाल मैनी* (उपर्युक्त) के मामले में याचिकाकर्ता के *विद्वान अधिवक्ता द्वारा* भरोसा किए गए निर्णय याचिकाकर्ता के लिए सहायक हैं क्योंकि उन मामलों में ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं था कि विद्वान अधिवक्ता की डायरी पर भरोसा नहीं किया जा सकता था।

(7) याचिकाकर्ता की इस दलील की सराहना करने के लिए प्रतिमुकदमी द्वारा आदेश 37 नियम 3 (5) के तहत एक आवेदन दायर किया गया है, जिसमें मुकदमे का बचाव करने के लिए अदालत की अनुमति मांगी गई है, उक्त आवेदन को व्यतिक्रम के लिए खारिज नहीं किया जा सकता है, नियम 3 (5) या आदेश 37 को फिर से पेश करना उचित होगा जो निम्नानुसार हैः—

आदेश 37 नियम 3:

"(5)—प्रतिमुकदमी, निर्णय के लिए ऐसे सम्मन देना की सेवा से दस दिनों के भीतर किसी भी समय, शपथ पत्र द्वारा या अन्यथा ऐसे तथ्यों का खुलासा करते हुए जो उसे बचाव करने का अधिकार देने के लिए पर्याप्त माने जा सकते हैं, ऐसे मुकदमे का बचाव करने के लिए अनुमति के लिए ऐसे सम्मन देना पर आवेदन कर सकता है और बचाव करने की अनुमति उसे बिना शर्त या ऐसी शर्तों पर दी जा सकती है जो न्यायालय या न्यायाधीश को न्यायसंगत लगेः

बशर्ते कि बचाव की अनुमति से तब तक इनकार नहीं किया जाएगा जब तक कि अदालत संतुष्ट नहीं हो जाता है कि प्रतिवादी द्वारा प्रकट किए गए तथ्यों से यह संकेत नहीं मिलता है कि उसके पास उठाने के लिए पर्याप्त बचाव है या प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला बचाव तुच्छ या परेशान करने वाला हैः

बशर्ते कि, जहां अभियोक्ता द्वारा दावा की गई राशि का एक हिस्सा प्रतिअभियोक्ता द्वारा उससे देय होने के लिए स्वीकार किया जाता है, तो मुकदमे का बचाव करने के लिए अनुमति तब तक नहीं दी जाएगी जब तक कि इस तरह से देय होने के लिए स्वीकार की गई राशि प्रतिअभियोक्ता द्वारा अदालत में जमा नहीं की जाती है।"

उप-नियम (5) के तहत पहले परंतुक से यह स्पष्ट है कि बचाव की अनुमति से तब

तक इनकार नहीं किया जा सकता जब तक कि अदालत संतुष्ट नहीं हो जाता है कि प्रतिवादी द्वारा प्रकट किए गए तथ्यों से यह संकेत नहीं मिलता है कि उसके पास उठाने के लिए पर्याप्त बचाव है या प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला बचाव तुच्छ या परेशान करने वाला है।यह स्वीकार किया जाता है कि इस मामले में प्रतिवादी ने नियम 3 के आदेश 37 के उप-नियम (5) के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया था। चूंकि आवेदन अभिलेख पर था, इसलिए विद्वत विचारण निचली अदालत को यह पता लगाने के लिए इस आवेदन की जांच करने की आवश्यकता थी कि क्या आवेदन में बताए गए तथ्यों से संकेत मिलता है कि उसे पर्याप्त बचाव करना है या प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत बचाव तुच्छ या परेशान करने वाला था।इस उद्देश्य के लिए याचिकाकर्ता या उसके वकील की उपस्थिति आवश्यक नहीं थी और इस तरह प्रतिमुकदमाी द्वारा मुकदमे का बचाव करने के लिए निचली अदालत की अनुमति मांगने के लिए दायर आवेदन को 28 सितंबर, 1992 का विमुकदमाित निर्णय पारित करते समय विद्वत निचली निचली अदालत द्वारा नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए।तथापि, 28 सितंबर, 1992 के निर्णय से मुझे पता चलता है कि विद्वत विचारण न्यायालय ने मुकदमा का बचाव करने के लिए निचली अदालत की अनुमति मांगने वाले आवेदन में प्रतिमुकदमाी द्वारा प्रकट किए गए किसी भी *तथ्य* का उल्लेख नहीं किया है।इसे देखते हुए, 28 सितंबर, 1992 के एकतरफा फैसले और डिक्री को दरकिनार करने से इनकार करने वाले विद्वत निचली निचली अदालत द्वारा पारित विवादित *आदेश को कानूनी रूप से* कायम नहीं किया जा सकता है।इस संबंध में मैसर्स सुशीला प्रोडक्शन इंजीनियर, चंडीगढ़ (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के फैसले का संदर्भ दिया जा सकता है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आदेश 37 सी. पी. सी. के तहत दायर एक मामले में, विद्वत निचली निचली अदालत से प्रतिमुकदमाियों द्वारा मुकदमे का बचाव करने के लिए अनुमति मांगने वाले अपने आवेदन में प्रकट किए गए तथ्यों पर निष्कर्ष देने की आवश्यकता थी।

(8) ऊपर अभिलिखित कारणों के लिए, याचिका मंजूर की जाती है और 28 सितंबर, 1992 के आक्षेपित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है और मामले को याचिकाकर्ता-प्रतिवादी द्वारा आदेश 37, नियम 3 (5) के तहत दायर आवेदन में बताए गए तथ्यों की जांच करने के बाद नए सिरे से निर्णय पारित करने के लिए विद्वत निचली अदालत को भेज दिया जाता है, जिसमें मुकदमे का बचाव करने के लिए अदालत की अनुमति मांगी जाती है। तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस प्रयोजन के लिए याचिकाकर्ता-प्रतिवादी को आगे कोई सुनवाई नहीं दी जाएगी क्योंकि 7 सितंबर, 1992 और 26 सितंबर, 1992 को प्रतिवादी और उसके वकील की अनुपस्थिति को प्रामाणिक नहीं ठहराया गया है। चूंकि वादी के विद्वत वकील द्वारा मामले में पहले ही तर्क दिया जा चुका है, इसलिए उसे आगे किसी भी तर्क को संबोधित करने की आवश्यकता नहीं है और विद्वत विचारण न्यायालय केवल आदेश 37, नियम 3 (5) के तहत याचिकाकर्ता-प्रतिवादी द्वारा दायर आवेदन की जांच करेगा

जैसा कि ऊपर कहा गया है। हालांकि, पार्टियों को अपना खर्च खुद वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है।

(9) रजिस्ट्री को निर्देश दिया जाता है कि वह इस आदेश की एक प्रति अनुपालन के लिए सीधे विद्वत विचारण न्यायालय को भेजे।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सूर्य करण चौधरी

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

कह्रखोदा (सोनीपत) हरियाणा|